मई९

इह चेदवेदीदथ सत्यमस्ति न चेदिहावेदीन्महती विनष्टिः।
भूतेषु भूतेषु विचित्य धीराः प्रेत्यास्माल्लोकादमृता भवन्ति॥५॥

यदि (साधक ने) यहाँ इस संसार में ब्रह्म को जान लिया, तो उसने (समस्त मानवीय आकांक्षाओं का) वास्तविक लक्ष्य प्राप्त कर लिया। यदि वह उसे यहाँ नहीं जान पाया, तो यह महान् विनाश है। बुद्धिमान् पुरुष समस्त प्राणियों में एकमेव आत्मा का दर्शन करते हुए ऐन्द्रिय जीवन से ऊपर उठ जाते हैं और अमर हो जाते हैं।

शिवानन्द-वाणी

जब आपका मन किसी वस्तु की इच्छा करता है और उसके लिए चिन्तित रहता है, तो आप बँधे हुए हैं। जब आपका मन किसी वस्तु की इच्छा नहीं करता है और न उसके लिए दुःखी ही होता है, तो आप मुक्त हैं।

जिस प्रकार अग्नि ईंधन को जला कर भस्म कर देती है, ठीक उसी प्रकार भगवान् का नाम मनुष्य के सब पापों को जला कर भस्म कर देता हैह्नचाहे उसका उच्चारण इच्छा से या अनिच्छा से, जाने या अनजाने ही क्यों न किया गया हो।

ज्ञानी और अज्ञानी दोनों ही व्यवहार करते हैं; परन्तु ज्ञानी में अहंकार (अभिमान) नहीं होता, इसलिए वह नहीं बँधता और अज्ञानी अहंकार से युक्त हो कर व्यवहार करता है, इसलिए वह बँधता है।

ज्ञानी न जाग्रतावस्था में जागता है, न स्वप्नावस्था में स्वप्न देखता है और न सुषुप्ति-अवस्था में नींद ही लेता है। वह नित्य अपने चिदानन्दरूप में स्थित रहता है।

यह संसार ज्ञानी और अज्ञानी दोनों को दीखायी पड़ता है; परन्तु ज्ञानी को मृगमरीचिका की भाँति असत्य और अज्ञानी को निरा सत्य प्रतीत होता है।

'मैं' और 'तू' तथा 'मेरा' और 'तेरा' ये सब असत्य है। इनका कोई वास्तविक अस्तित्व नहीं है। केवल ब्रह्म ही सत्य है।

जो सत्ययुग में ध्यान के द्वारा, त्रेता में यज्ञ के द्वारा और द्वापर में निष्काम सेवा के द्वारा प्राप्त किया जाता था, वही इस कलिकाल में भगवान् के गुणगान द्वारा प्राप्त किया जा सकता है।

आहार का अर्थ केवल यही नहीं है कि हम क्या खाते हैं; अपितु वह सब है जो हम इन्द्रियों द्वारा ग्रहण करते हैं। ईश्वर का सर्वत्र दर्शन करना सीखें, यही मन का वास्तविक आहार है।

संकीर्ण बुद्धि वाला मनुष्य पूछता है 'क्या यह मनुष्य हमारी जाति का है या यह दूसरी जाति का है?' परन्तु जिसके हृदय में प्रेम का निवास है, वह तो समस्त जगत् को अपना ही समझता है।

स्वामी शिवानन्द

ब्रह्मचर्य-साधना :

मैथुन के अति-भोग के अनर्थकारी परिणाम

परम श्रद्धेय श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज

सभी सुखों में सर्वाधिक ओजहीन करने तथा नैतिक पतन लाने वाला है यौन-सुख। विषय-सुख के साथ विविध दोष लगे रहते हैं। इसके साथ विविध प्रकार के पाप, दुःख, दुर्बलताएँ, आसक्तियाँ, दास-मनोवृत्ति, अदृढ़ संकल्प-शक्ति, कठोर श्रम तथा संघर्ष, लालसा तथा मानसिक अशान्ति लगे होते हैं। सांसारिक व्यक्तियों पर यद्यपि विविध दिशाओं से आघात, पाद-प्रहार, मुष्टि-प्रहार आदि होते हैं; पर उनको कभी भी होश नहीं आता। गलियों में फिरने वाले कुत्ते पर प्रत्येक बार पथराव होने पर भी वह घरों में चक्कर मारना बन्द नहीं करता है।

पश्चिम के प्रख्यात चिकित्सक कहते हैं कि वीर्य-क्षय से, विशेषकर तरुणावस्था में वीर्य-क्षय से विविध प्रकार के रोग उत्पन्न होते हैं। वे हैं : शरीर में व्रण, चेहरे पर मुँहासे अथवा विस्फोट, नेत्रों के चतुर्दिक् नीली रेखाएँ, दाढ़ी का अभाव, धँसे हुए नेत्र, रक्तक्षीणता से पीला चेहरा, स्मृति-नाश, दृष्टि की क्षीणता, मूत्र के साथ वीर्य-स्खलन, अण्डकोश की वृद्धि, अण्डकोशों में पीड़ा, दुर्बलता, निद्रालुता आलस्य, उदासी, हृदय-कम्प, श्वासावरोध या कष्टश्वास, यक्ष्मा, पृष्ठशूल, कटिवात, शिरोवेदना, सन्धि-पीड़ा, दुर्बल वृक्क, निद्रा में मूत्र निकल जाना, मानसिक अस्थिरता, विचार-शक्ति का अभाव, दुःस्वप्न, स्वप्न-दोष तथा मानसिक अशान्ति।

वीर्य-शक्ति की क्षति के पश्चात् जो अनर्थकारी उत्तर प्रभाव पड़ता है, उस पर सावधानीपूर्वक ध्यान दें। वीर्य-शक्ति को अनेकानेक बार अकारण ही नष्ट करने से लोग शरीर, मन तथा नैतिक दृष्टि से दुर्बल हो जाते हैं। शरीर तथा मन कर्मठतापूर्वक कार्य करने से इनकार कर देते हैं। शारीरिक तथा मानसिक अकर्मण्यता होती है। आपको अधिक थकान तथा कमजोरी का अनुभव होता है। आपको शक्ति की क्षति-पूर्ति के लिए दुग्ध-पान तथा फल और कामोद्दीपक अवलेह के सेवन की शरण लेनी होगी। स्मरण रहे कि ये पदार्थ कभी भी पूर्णतया क्षति की प्रतिपूर्ति नहीं कर सकते। एक बार नष्ट हुई, तो सदा के लिए नष्ट हुई। आपको नीरस तथा विषण्ण जीवन घसीटना होगा। शारीरिक तथा मानसिक शक्ति दिन-प्रति-दिन क्षीण हो जाती है।

जिन व्यक्तियों ने अपना वीर्य अत्यधिक नष्ट कर डाला है, वे बहुत ही चिड़चिड़े हो जाते हैं। सामान्य बातें भी उनके मन को अशान्त बना देती हैं। जिन्होंने ब्रह्मचर्य-व्रत का पालन नहीं किया है, वे क्रोध, ईर्ष्या, आलस्य तथा भय के दास बन जाते हैं। यदि आपने अपनी इन्द्रियों को नियन्त्रित नहीं किया है, तो आप ऐसे मूर्खतापूर्ण कार्य करने का साहस कर बैठेंगे जिन्हें बच्चे भी करने का साहस नहीं करेंगे।

जिसने जीवन-शक्ति का अपव्यय किया है, वह सहज में चिड़चिड़ा बन जाता है। वह अपना मानसिक

सन्तुलन खो बैठता है तथा सामान्य बातों के लिए विस्फोटक प्रकोप की अवस्था में जा पहुँचता है। प्रकुपित होने पर व्यक्ति अभद्र व्यवहार करता है। वह नहीं जानता कि वह वस्तुतः कर क्या रहा है; क्योंकि वह अपनी विचार तथा विवेक-शक्ति को खो बैठता है। वह स्वेच्छानुसार कोई भी कार्य कर बैठता है। वह अपने माता-पिता, गुरु तथा सम्मान्य लोगों का भी अपमान करता है। अतः जो साधक सद्व्यवहार के विकास के लिए प्रत्यनशील है, उसके लिए यह उचित है कि वह वीर्य की रक्षा अवश्यमेव करे। इस दिव्य शक्ति का परिरक्षण सुदृढ़ संकल्प-शक्ति, सद्व्यवहार, आध्यात्मिक उत्कर्ष तथा अन्ततः श्रेय अथवा मोक्ष को प्राप्त कराता है।

अत्यधिक मैथुन से शक्ति अति-मात्रा में निकल जाती है। नवयुवक इस तरल द्रव वीर्य के महत्त्व का स्पष्ट रूप से अनुभव नहीं करते। वे अमर्यादित मैथुन से इस सक्रिय शक्ति को नष्ट करते हैं। उनकी स्नायुओं को अधिक गुदगुदी होती है। वे मदोन्मत्त हो जाते हैं और क्या ही गम्भीर भूल करते हैं! यह अपराध है और इसके लिए मृत्युदण्ड अपेक्षित है। वे आत्महत्यारे हैं। एक बार नष्ट हो जाने पर इस शक्ति की किसी अन्य साधन से कभी भी क्षति-पूर्ति नहीं की जा सकती। यह संसार में सर्वाधिक बलवती शक्ति है। एक मैथुन-क्रिया मस्तिष्क तथा स्नायु-तन्त्र को पूर्णतया छिन्न-भिन्न कर डालती है। लोग मूर्खतावश यह समझते हैं कि वे खोयी हुई शक्ति को दुग्ध, बादाम तथा मकर-ध्वज के सेवन से पुनः प्राप्त कर लेंगे। यह एक भूल है। आपको, भले ही आप विवाहित व्यक्ति हैं, इसकी प्रत्येक बूँद के संरक्षण का यथाशक्य प्रयास करना चाहिए। आत्म-साक्षात्कार ही आपका लक्ष्य है।

एक मैथुन में अपव्यय होने वाली शक्ति दश दिन के शारीरिक कार्य में व्यय होने वाली शारीरिक शक्ति अथवा तीन दिन के मानसिक कार्य में प्रयुक्त होने वाली मानसिक शक्ति के तुल्य होती है। ध्यान दीजिए कि यह प्राणाधार द्रव वीर्य कितना मूल्यवान् है! इस शक्ति का अपव्यय न कीजिए। इसका परिरक्षण बहुत सावधानीपूर्वक कीजिए। इससे आपको अद्भुत ओजस्विता प्राप्त होगी। वीर्य के प्रयुक्त न करने पर वह ओज-शक्ति में रूपान्तरित हो जाता है तथा मस्तिष्क में संचित रहता है। पाश्चात्य चिकित्सकों को इस विशिष्ट विषय की अल्प-जानकारी ही है। आपके अधिकांश रोगों का कारण वीर्य का अत्यधिक अपव्यय ही है।

स्वप्न-दोष तथा स्वैच्छिक मैथुन में एक महत्त्वपूर्ण अन्तर

एक मैथुन-क्रिया स्नायु-तन्त्र को छिन्न-भिन्न कर डालती है। इस क्रिया में सम्पूर्ण स्नायु-तन्त्र झकझोर उठता अथवा उत्तेजित हो जाता है। इसमें शक्ति की अत्यधिक क्षति होती है। मैथुन में अत्यधिक शक्ति नष्ट होती है; किन्तु जब स्वप्नावस्था में वीर्यपात होता है, तब ऐसा नहीं होता। स्वप्न-दोष में केवल शिश्न-ग्रन्थियों के रस का निःस्राव होता है। यदि इस प्राणाधार द्रव वीर्य की क्षति होती भी है, तो यह अपक्षय अधिक नहीं होता है। स्वप्न-दोष में वास्तविक तत्त्व बाहर नहीं आता है। स्वप्न-दोष के समय जो पदार्थ बाहर आता है, वह थोड़े-से वीर्य के साथ शिश्न-ग्रन्थियों का पतला रस मात्र होता है। जब

स्वप्न-दोष होता है, मन जो आन्तरिक सूक्ष्म शरीर में कार्यरत था, अकस्मात् उत्तेजित दशा में स्थूल शरीर में प्रवेश करता है। यही कारण है कि सहसा वीर्यपात हो जाता है।

स्वप्न-दोष से काम-वासना उद्दीप्त नहीं होती; परन्तु सच्चे साधक के विषय में स्वैच्छिक मैथुन उसकी आध्यात्मिक उन्नति में अत्यन्त हानिकारक होता है। इस क्रिया से उत्पन्न संस्कार बहुत गहरे होते हैं और ये अवचेतन मन में पहले से ही सन्निहित पूर्ववर्ती संस्कारों की शक्ति को तीव्र करते अथवा सुदृढ़ बनाते तथा काम-वासना को उदीप्त करते हैं। यह शनैः-शनैः बुझ रही अग्नि में घी डालने के समान है। इस नये संस्कार को मिटाना एक श्रमसाध्य कार्य है। आपको मैथुन का पूर्णतया त्याग कर देना चाहिए। मन आपको असत् परामर्श दे कर नाना प्रकार से धोखा देने का प्रयास करेगा। सावधान रहें। इसकी वाणी को न सुनें। इसके स्थान में अन्तःकरण की वाणी को, आत्मा की वाणी को अथवा विवेक की वाणी को सुनने का प्रयास करें।

रक्तहीन शरीर वाले युवक

मैथुन में अत्यधिक शक्ति नष्ट होती है। स्मरण-शक्ति का ह्रास, असामयिक वृद्धावस्था, नपुंसकता, नाना प्रकार के नेत्र-रोगों तथा विविध स्नायविक रोगों के लिए इस प्राणाधार द्रव की भारी क्षति ही उत्तरदायी मानी जाती है। हृष्ट-पुष्ट तथा ओज-सम्पन्न, फुरतीले तथा द्रुत पग से गिलहरी की भाँति इधर-उधर उछलने-कूदने के स्थान में हमारे अधिकांश नवयुवक इस प्राणाधार द्रव वीर्य की क्षति के कारण रक्तहीन, निष्प्रभ मुखों से लड़खड़ाते हुए पैरों से चलते दिखायी पड़ते हैं, जो निश्चय ही अत्यधिक शोचनीय बात है। कुछ व्यक्ति तो इतने कामुक तथा दुर्बल हैं कि स्त्री के विचार, दर्शन अथवा स्पर्श मात्र से उनका वीर्यपात हो जाता है। उनकी दशा दयनीय है।

इन दिनों हम क्या देखते हैं? लड़के तथा लड़कियाँ, पुरुष तथा स्त्रियाँ दूषित विचार, काम-वासना तथा स्वल्प विषय-सुख के सागर में निमग्न हैं। यह निश्चय ही अत्यन्त खेदजनक बात है। इनमें से कुछ लड़कों का वृत्तान्त सुन कर वास्तव में दिल दहल जाता है। महाविद्यालयों के अनेक छात्र मेरे पास स्वयं आये तथा अप्राकृतिक साधनों के परिणाम-स्वरूप वीर्य की अत्यधिक क्षति से उत्पन्न अपने उदास तथा विषादमय दयनीय जीवन के विषय में बताया। कामोत्तेजना तथा कामोन्माद के कारण उनकी विवेक-शक्ति नष्ट हो गयी है। जो शक्ति आप कई सप्ताह तथा महीनों में प्राप्त करते हैं, उसे स्वल्प, क्षणिक विषय-सुख के लिए क्यों नष्ट करते हैं!

(अनूदित)

इस भ्रमपूर्ण चिन्तन को छोड़ें कि हमारे भीतर प्रकाश नहीं है, कि केवल आध्यात्मिक अन्धकार ही है, कि अभी कुछ-न-कुछ जला कर प्रकाश करना है। आपको किसने ऐसा कहा है? कौन-से ग्रन्थ में यह कहा गया है? किस गुरु ने यह बताया है? आप इस भूल से क्यों चिपटे हुए हैं और क्यों इसे छोड़ नहीं रहे हैं कि भीतर प्रकाश नहीं है? क्या मैं अनेकों बार नहीं कह चुका हूँ कि 'मैं प्रकाश में हूँ। प्रकाश मेरे भीतर है। मैं प्रकाश ही हूँ।'

स्वामी चिदानन्द

मन से अतीत जायें

परम पावन श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज

आपका यह शरीर रूपी घर, यदि आप ठीक रूप से समझते हैं, यदि आप इसके साथ अपना सही नाता जानते और पहचानते हैं, तो आपकी आध्यात्मिक उन्नति और मोक्ष के लिए मिला हुआ एक क्षेत्र है। यह आपका बन्धन नहीं है; यह आपके लिए समस्या नहीं है, आपका शत्रु नहीं है यह। किन्तु आप इसे अपने लिए एक बन्धन, समस्या और शत्रु बना लेते हैं।

यह हमारा दुर्भाग्य है, क्योंकि हमारे महान् सन्तों और पथ-प्रदर्शक गुरु जनों ने बार-बार हमें बताया है कि असंख्य निम्नतर योनियों में भटकने के उपरान्त जीवात्मा को यह दुर्लभ मनुष्य-देह 'ईश-कृपा-वश' प्राप्त होती है। जब ऐसा है, तब आप कैसे कह सकते हैं कि यह बन्धन है? यह कथन तो अनुचित है। यह बात तो तर्क-संगत नहीं है कि विकास-प्रक्रिया के सर्वोच्च पद को बन्धन अथवा समस्या कह दिया जाये। यह तो सर्वथा अयुक्ति-संगत है। ऐसा तो हो ही नहीं सकता। और ऐसा यह है भी नहीं।

यह तो जीव में विवेक और विश्लेषण का अभाव तथा उसका इच्छाओं के वशीभूत हो जाना ही है जो मानव को एक महान् वरदान के स्थान पर एक भार-रूप और इस 'मोक्ष के द्वार' को बन्धन-रूप बना देता है। विषय-पदार्थ स्वयं हमें तंग करने, हमें पकड़ लेने के लिए नहीं आते। यह तो आपकी कल्पनाएँ और इच्छाएँ ही हैं, जो आपको विषय-वस्तुओं के पीछे मूर्खतापूर्वक भागने को विवश करती हैं। यह बुद्धिहीन प्रक्रिया है जिसका कारण अज्ञान है।

क्योंकि सत्य तो यह है कि आप जिसे खोजने में लगे हुए हैं, वास्तव में आप 'वह' ही हैं, शतश: 'वह' हैं, सहस्रश: 'वह' ही हैं। आप वह हैं, जिसकी खोज में समस्त जगत् लगा हुआ है। आप 'आनन्द-स्वरूप आत्म-तत्त्व' हैं, जहाँ न कोई दु:ख है न कष्ट। शान्ति और आनन्द आपका वास्तविक स्वरूप है, आपका निज-स्वरूप है। यह सत्य हमारे प्रत्येक पूर्वज ने सदियों से उद्घोषित किया हुआ है; किन्तु हमने ही इससे मुँह मोड़ रखा है। अत: भगवान् ने अवर्णनीय अहैतुकी कृपा के रूप में हमारे पूर्वजों के द्वारा आह्वान किया कि 'क्यों व्यर्थ में अपने ही द्वारा रचे हुए इस बन्धन में फँसे बैठे हो? उठो, जागो, प्रबोधन प्राप्त करो और आनन्द से परिपूर्ण हो जाओ!'

इसलिए हम स्पष्टवादी और निष्पक्ष हो कर नि:संकोच इसे स्वीकार कर लें कि इस पुकार के प्रति उपेक्षा भाव रखे रहने के कारण ही हमारी यह समस्या बनी हुई है। क्योंकि सत्य तो यह है कि हमें निश्चित रूप से यह जान लेना और स्वीकार कर लेना चाहिए कि हम ही वस्तुओं के पीछे भागते हैं। इसलिए जब हम संसार को, वस्तु-पदार्थों को, परिस्थितियों को अथवा व्यक्तियों को दोष देते हैं कि वह हमारा ध्यान अपनी ओर खीचते हैं, तोह्नह्नजैसा कि पिछली चर्चा में संकेत दिया गया थाह्नह्नवास्तव में यह हमारे ही काम, लोभ, लालसाएँ और हमारी ही उपद्रवी इन्द्रियाँ हैं, जो कि समस्या उत्पन्न करती हैं। इसे सिद्ध करने के लिए पिछली चर्चा में हमने कल्पना की थी कि हम अपने

एकाकी कक्ष में रात्रि के समय अन्धकार करके बैठ जायें, बाहर से कोई ध्यान भंग करने वाला न हो, तो भी हम तत्काल समाधि में नहीं जा पाते। यह इसलिए होता है कि वास्तव में ध्यान खींचने वाले तत्त्व कहीं बाहर नहीं हैं; यह तो हम ही हैं जो अपनी अभिरुचियों द्वारा मोह और इच्छाओं के आन्तरिक सम्बन्धों द्वारा, 'मैं और मेरे' द्वारा ऐसी समस्या उत्पन्न कर लेते हैं।

ऐसा क्यों होता है? क्योंकि आप उदासीन हैं। आप अपने अन्त:स्थित परम तत्त्व की विद्यमानता को अनुभव करने की उपेक्षा करते हैं, अपने भीतर स्थित उस शाश्वत सहचर को, जो आपका अन्तरात्मा बन कर प्रकाशित हो रहा है, जिसने समस्त बाह्यगामी इन्द्रियों से स्वयं को छिपा रखा है, उसकी आप उपेक्षा कर रहे हैं। वह तो एक क्षण के लिए भी आपके जीवन से परे नहीं जाते, किन्तु आप उनकी उपस्थिति को अनुभव करना नहीं चाहते। आप उन्हें पहचानना ही नहीं चाहते। यदि आप उन्हें पहचान लें, तो आपकी समस्या तभी सुलझ जायेगी।

जब आप अपने अन्तरतम में उतरेंगे, तो आप उन्हीं के साथ निवास करेंगे। तब आप अपनी अन्त:-स्थित विद्यमानता के विषय में सोचे बिना रह ही नहीं सकते; क्योंकि आपके इस जगत् में जितनी भी वस्तुओं का अस्तित्व है, उन सबमें वह आपके निकटतम वस्तु-पदार्थों से भी कहीं अधिक निकट हैं। इसलिए समस्या का समाधान वहीं करना होगा, जहाँ पर समस्या है। यह हम किस प्रकार कर सकते हैं? दक्षिणामूर्ति और शंकराचार्य हमें यह दर्शाते हैं। मौन रह कर, बिना शब्दों के वह हमें संकेत देते हैं।

जान लें, इस तथ्य को समझ लें कि वह परम तत्त्व और आप सदा परस्पर जुड़े हुए, परस्पर सम्बन्धित हैं। आपमें और भगवान् में सदैव एक अटूट अनन्त सम्बन्ध है। आप उनसे भिन्न नहीं हैं। इसके विपरीत इस बाह्य जगत् की अन्य प्रत्येक वस्तु से आप अलग हैं। क्योंकि वह सब भौतिक अन्तर से आपसे अलग हैं, दूर हैं। जब कि आप और परमात्मा सदैव संयुक्त हैं, सदा एक हैं। इस सत्य से अपने नेत्र मूँद न लें, क्योंकि आपकी समस्या का समाधान यही है। समस्या कहीं बाहर नहीं, भीतर ही है।

इस संयोजन से दूर न हटें। सदैव इस संयोजन में स्थित रहें। कभी परमात्मा से विलग न हों। अपनी पूर्ण शक्ति से, अपने अस्तित्व की सम्पूर्णता से उसके साथ जुड़े रहें। उस परम सत्य में निवास करें। अपने केन्द्रीय तत्त्व में स्थित रहें। आप ऐसा ही करेंगे, इस पर दृढ़ता से अटल रहें। यदि कुछ भी, किंचिन्मात्र भी कोई इसमें विघ्न डालने का प्रयत्न करे, तो तत्काल कह देंह्न ''हटो, मैं अपने केन्द्र में स्थित हूँ।'' अपने भीतर के इस एकत्व में स्थित रहें। अपने अन्तरतम की आध्यात्मिक गुहाह्नह्नजहाँ कोई भी विकर्षण पहुँच नहीं सकताह्नह्नमें बने रहें। अपनी आत्मा में निवास करें।

और मन के द्वारा रचे गये विकर्षणों का क्या हो? उनको क्या करेंगे? **''मनो बुद्ध्यहंकार चित्तानि नाऽहम्''** शंकराचार्य ने कहा है, और गुरुदेव ने हमें सूत्र दिया हैह्नह्न''किसी का भी अस्तित्व नहीं है। कुछ भी मेरा नहीं है। मैं न तो मन हूँ, न ही देह। मैं अमर आत्मा हूँ।'' इस सूत्र की प्रथम पंक्ति समस्त जगत् को नकार देती है कि किसी की भी सत्ता नहीं है। और यदि आप यह समझते हैं कि किसी की सत्ता है, तो दूसरी पंक्ति यह स्पष्ट कर देती है कि कुछ भी मेरा नहीं है; क्योंकि सब-कुछ की रचना तो मन, विचारों, कल्पनाओं, आसक्तियों तथा 'मैं और मेरे पन' द्वारा ही

रचित है। और इनमें से कोई भी मुझे परेशान नहीं कर सकता; क्योंकि मैं न तो मन हूँ और न ही शरीर।

और यदि ये आपको सताते हैं, तब भी चिन्ता करने की क्या आवश्यकता है? आपके चतुर्दिक् प्रत्येक के मन में असंख्य विचार, आसक्तियाँ, इच्छाएँ और लालसाएँ हैं। उन सबके विषय में क्या आप चिन्ता करते हैं? उनसे क्या आप अपना सम्बन्ध जोड़ते हैं? किसी प्रकार से उद्विग्न होते हैं? इस महत्त्वपूर्ण सत्य पर क्यों नहीं सोचते? लोगों के मनों में कितना भी उलट-फेर मचा रहे, वह आपको व्याकुल नहीं करता; क्योंकि वह आपको स्पर्श नहीं करता, आपको प्रभावित नहीं करता अथवा आपके लिए कोई समस्या उत्पन्न नहीं करता।

तब केवल यही मन ऐसा क्यों करता है? यह क्यों समस्या खड़ी करता है? इसके साथ भी वही व्यवहार रखें जो आप दूसरे लोगों के मन में मचे हुए बवण्डर से रखते हैं। आप क्यों सोचते हैं कि यह समस्या है? आप कहिएह्नह्न''यह कहीं कुछ हो रहा है, मैं क्यों व्याकुल होऊँ? मैं जहाँ हूँ, वही हूँ, आनन्द के अति-सन्निकट, शान्ति के साथ पूर्णतया संयुक्त, उस परम तत्त्व के साथ पूर्णतया एक, जो सबके हृदयों में निवास करने वाला है।''

तब आप उसी अवस्था में स्थित हो जायेंगे जो कि आप वास्तव में हैं। केवल एक इस मन को व्यर्थ ही इतनी बड़ी बात न बनायें। इतना मोह क्यों? इस मन से यह अपनापन क्यों? करोड़ों मन आपके चहुँओर घूम रहे हैं, उनके साथ तो आप स्वयं को नहीं जोड़ते। वह आपके लिए समस्या खड़ी नहीं करते। तब फिर एक यही मन क्यों?

यही आपकी समस्या का मूल कारण है, यह अनावश्यक, निरर्थक ही किसी होने वाली घटना-परिस्थिति से स्वयं को जोड़ लेना! इनके साथ भी वही व्यवहार रखें जो अन्य चारों ओर उठती रहने वाली तरंगों से रखते हैंह्नह्न''यह जैसे चलती हैं, चलती रहें, मेरे साथ इनका कुछ लेना-देना नहीं है। अन्य असंख्य मनों में यह उठती रहती हैं, यहाँ भी रहें, मैं अपने शाश्वत केन्द्र में स्थित हूँ। मैं क्यों इस अस्तित्वहीन मिथ्या केन्द्र की ओर जाऊँ?''

इसलिए इस परिस्थिति का प्रारम्भिक बिन्दु और इस मुख्य समस्या का कारण है अपनी वास्तविकता, अपनी आत्मा को केन्द्रीय स्थान देने की अपेक्षा अपनी उपाधियों, अपने अनात्म तत्त्व को केन्द्रीय स्थान दे देना। अत: इसे समझें, इसको नकार दें और अपनी आत्मा में निवास करें। देश और काल से, नामों और रूपों से अतीत जायें और सदैव ईश्वरीय जागरूकता की अवस्था में स्थित रहेंह्नह्नवह ही आपके अद्भुत व्यक्तित्व के अन्तरतम प्रकोष्ठ में वास्तविक और सत्य स्वरूप में विद्यमान हैं, आपका अन्तरतम केन्द्रीय स्थलह्नह्नजहाँ आप पूर्णतया अस्पर्शित, परिपूर्ण दिव्यता में स्थित हैं।

यही कार्य करना अनिवार्य है। सभी बाह्य आध्यात्मिक प्रक्रियाएँ, अनुष्ठान और साधनाएँ उस आन्तरिक अवस्था को प्राप्त करने के लिए ही हैं जो कि पहले से ही विद्यमान है। यह तो वास्तव में उस अवस्था को पुन: प्रतिष्ठित करना है, जिससे कि आप दूर हटे हुए हैं। एक बार यह अवस्था पुन: स्थापित हो जाने पर आपके भीतर स्वर्ग का साम्राज्य स्थापित हो जायेगा।

(अनुवादिका : श्रीमती सुधा भारद्वाज)

प्रणव-रूप आत्मा १

परम पावन श्री स्वामी कृष्णानन्द जी महाराज

ओंकार आत्मा का अभिधेय (वाच्यार्थ) है। इसी से उपनिषद् का उपक्रम हुआ। यह ओंकार जो सर्वस्व है, सर्वव्यापक है, इस सर्वस्व आत्मा का वाचक शब्द है। आत्मा वाच्य है, तो ओंकार अथवा प्रणव वाचक शब्द हैं।

आत्मा के तीन सापेक्ष पाद हैं, तो ओंकार के भी तीन सापेक्ष पाद हैं। अकार, उकार, मकारह्नह्नओंकार के तीन अनिवार्य घटक हैं। आत्मा के अभिव्यक्त रूप के अनिवार्य घटक जैसे जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति की अवस्थाएँ हैं वैसे ही ओंकार की अभिव्यक्ति उसके त्र्यक्षर रूप में है।

'पादा मात्रा मात्राश्च पादा'ह्नह्न(आत्मा के) पाद ही मात्रा हैं और मात्रा ही पाद हैं। **'अकार उकारो मकार इति'**ह्नह्नअ, उ और म ही मात्राएँ हैं। **'सोऽयमात्माध्यक्षरम्'** यह आत्मा अध्यक्षर है अर्थात् अविनाशी अक्षर ओंकार का अधिष्ठाता है। **'अधिमात्रम्'**ह्नह्नयह अधिमात्र है अर्थात् मात्राओं को विषय करके, मात्राओं को आश्रय करके स्थित है। यह अ, उ, म का भी अधिष्ठाता है जिनकी तुलना आत्मा की तीन अवस्थाओं से की जा सकती है। ये तीन अभिव्यक्त अवस्थाएँ हैंह्नह्नजाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति। वाचक के रूप में यह परम आत्मा वाचक ओंकार से तुलना के योग्य है। अब हमें यह स्पष्ट करना है कि ये तीन अक्षर तीन अवस्थाओं से किस प्रकार तुलना के योग्य हैं। और भी, जिस प्रकार आत्मा की अभिव्यक्त तीन अवस्थाओं से परे एक अन्य अवस्था भी है, उसी प्रकार ओंकार की भी सर्वातिरिक्त अवस्था है जो अकार, उकार और मकार से अतीत है। प्रज्ञा की जिस प्रकार से चार अवस्थाएँ हैं, उसी प्रकार से ओंकार की भी चार अवस्थाएँ हैं जो क्रमश: अपने प्रतिरूप आत्मा की चार अवस्थाओं के तुल्य हैं।

आत्मा का प्रथम पाद क्या है? यह वैश्वानर है। वैश्वानर अथवा विश्व आत्मा की प्रथम अभिव्यक्ति है। इसकी तुलना प्रणव अथवा ओंकार की प्रथम अभिव्यक्ति से की जा सकती है। जागरितस्थान अथवा वैश्वानर की जाग्रतावस्था ओंकार का प्रथम पाद है।

'जागरितस्थानो वैश्वानरोऽकार: प्रथमा मात्रा'ह्नह्नजागरितस्थान अथवा आत्मा की जाग्रतावस्था, जिसे विश्व अथवा वैश्वानर कहा जाता है, ओंकार की प्रथम मात्रा अकार है। **'आप्तेरादिमत्त्वद्वा'**ह्नह्नआत्मा के प्रथम पाद से अकार की समानता अत्यन्त विशिष्ट रूप में है। प्रज्ञा की समस्त अवस्थाएँ सापेक्ष भाव में जाग्रतावस्था से प्रारम्भ होती हैं तथा इसी में स्वप्न और सुषुप्ति की अवधारणा भी कर ली जाती है। ईश्वर के दृष्टिकोण से तो नहीं, परन्तु जीव के दृष्टिकोण से जाग्रतावस्था कारण है और स्वप्न तथा सुषुप्ति कार्य रूप हैं। यदि स्वप्न जाग्रतकालीन दृश्यों के संस्कारों का परिणाम है,

तो सुषुप्ति ऐसी अवस्था है जिसमें सभी अतृप्त (अपूर्ण) संस्कार अथवा वासनाएँ विलीन हो जाती हैं, पश्चात्काल में पुन: प्रकट होने के लिए। इस भाव में यह कथन उचित ही होगा कि जाग्रतावस्था अन्य अवस्थाओं की प्रारम्भिक अवस्था है। एवंविध, अकार अन्य सभी वर्णों का प्रारम्भिक अक्षर है, यह वर्णमाला का प्रथम अक्षर है। इसी अकार में सम्पूर्ण शब्द-रचना निहित है। जिस क्षण कुछ बोलने के लिए आप अपना मुख खोलते हैं, संवेदना 'अ' के उच्चारण की ही प्रत्यक्ष होती है। इसलिए उपनिषद् में इसे शब्द-रचना का प्रथम अक्षर माना गया है। शब्द-रचना के इस प्रारम्भ की तुलना चेतना के अनुभवों के प्रारम्भ से की गयी है जो कि जाग्रतावस्था है। अत: जागरितस्थान में आत्मा के इस पाद की तुलना ओंकार के प्रथम अक्षर से की गयी है।

उपनिषद् का यह भी कथन है कि ओंकार के अकार और आत्मा के प्रथम पाद में जो अभेद जान कर उपासना करता है, उसकी समस्त कामनाएँ पूर्ण हो जाती हैंह्वह्व**'आप्नोति ह वै सर्वान् कामान्।'** वह सब महापुरुषों में प्रथम रहता है और समस्त पदार्थों का स्वामी बनता है, क्योंकि बिना माँगे ही सब पदार्थ उसके पास आ जाते हैं। **'आदिश्च भवति'**ह्वह्ववह सबका मुखिया बनता है। छान्दोग्योपनिषद् में भी वैश्वानरविद्या के सन्दर्भ में ध्यान द्वारा योगी को इस प्रकार की प्राप्ति का वर्णन है। यद्यपि माण्डूक्योपनिषद् में वैश्वानर का अत्यन्त संक्षिप्त विवरण है, छान्दोग्योपनिषद् में वैश्वानरविद्या का विस्तृत विवरण और स्पष्टीकरण दिया गया है।

आत्मा के इस विराट् रूप, वैश्वानर पर ध्यान करने से योगी वह शक्ति प्राप्त करता है जो अन्य किसी वस्तु से प्राप्य नहीं है और अनायास ही, बिना कामना किये संसार का समस्त ऐश्वर्य उसे प्राप्त होता है। वास्तविक शक्ति तो वही है जो शब्दों में कहे बिना ही पदार्थों को अपनी ओर आकर्षित करती है। आप किसी से यह नहीं कहतेह्वह्व'यह कार्य करो', किन्तु 'वह कर देता है', अथवा कार्य हो जाता है। यह है शक्ति का उत्कर्ष! यह वैश्वानर पर ध्यान करने से प्राप्त होती है।

'य एवं वेद'ह्वह्वजो मनुष्य आत्मा की जाग्रतावस्था और अकार के एकत्व पर ध्यान के रहस्य को जानता है, जो वैश्वानर-आत्मा और ओंकार की प्रथम मात्रा अकार में अभेद जान कर ध्यान करता है, वह समस्त पदार्थों का स्वामी बनता है, पूर्ण सिद्ध पुरुष बनता है और कुशल योगी बनता है। यह जागरित-स्थान के विषय में है जो वैश्वानर है, प्रथम पाद है, अकार है और जो ऐसा ही फल प्रदान करने वाला है जब इस प्रकार से अर्थात् अभेद-भाव से उस पर ध्यान किया जाये। **(अनुवादिका : श्रीमती गुलशन सचदेव)**

यदि मन को उच्चतर विषयों की ओर मोड़ दिया जाता है, तो ब्रह्मचर्य-पालन स्वयमेव ही सरल हो जाता है। आप ब्रह्मचर्य-पालन करने में सफल हो सकते हैं यदि आपका मन पूरी तरह से किसी ऐसी वस्तु की ओर आकर्षित हो जाये जो इतनी अद्भुत, इतनी विलक्षण और इतनी महान् हो कि वह आपको पूरी तरह से अपने में लीन कर ले और आपको ऊपर उठा देहह्वआपके मन को बस वह जकड़ ही ले! **स्वामी चिदानन्द**

बच्चों के लिए दिव्य जीवन :

महाकाव्य और महापुराण १

परम पावन श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज

महाभारत-युद्ध

दुर्योधन के अन्धे पिता का नाम धृतराष्ट्र था। दुर्योधन न्यायी और सुशील नहीं था। उसने पाण्डु के पुत्रों का राज्य जुए में जीत लिया।

महाभारत का युद्ध हुआ। अर्जुन और भीमह्नदोनोंह्नखूब वीरता के साथ लड़े। उन्होंने धृतराष्ट्र के कई पुत्रों (कौरवों) को मार डाला।

कौरवों के सेनापति भीष्म अर्जुन के हाथों घायल हुए। अन्त में पाण्डवों की विजय हुई।

पाण्डव

बहुत वर्षों पहले भारत में पाण्डु और धृतराष्ट्र नामक दो महान् राजा थे। पाण्डु के पाँच पुत्र थे।

सबसे बड़े पुत्र का नाम युधिष्ठिर था। युधिष्ठिर धर्मात्मा और सद्गुणी थे। दूसरे पुत्र का नाम भीम था। वह बहुत बलवान् और महान् योद्धा थे। तीसरे पुत्र अर्जुन थे जो धनुर्विद्या में कुशल थे।

अन्तिम दो पुत्रह्नह्ननकुल और सहदेवह्नह्न जुड़वाँ भाई थे। वे पाण्डव कहलाते थे।

कौरव

धृतराष्ट्र जन्म से अन्धे थे। उनके एक सौ पुत्र थे। सबसे बड़ा पुत्र दुर्योधन था।

दुर्योधन का भाई दु:शासन था। द्रौपदी के बाल खींचने वाला यही था। तब भीम ने प्रतिज्ञा की थी कि वह दु:शासन का रक्त पान करेगा। अन्त में उसकी प्रतिज्ञा पूरी हुई।

धृतराष्ट्र के सभी पुत्र बहुत अन्यायी और दुष्ट थे। उन्हें पाण्डवों के प्रति बहुत ईर्ष्या थी। वे कौरव कहलाते थे। कौरवों और पाण्डवों की कथा महाभारत नामक ग्रन्थ में लिखी हुई है।

रामायण पढ़ो

मेरे प्रिय कृष्ण! प्रतिदिन रामायण पढ़ो। तुम अच्छे बच्चे बनोगे। भगवान् राम तुम्हें आशीर्वाद देंगे। भगवान् राम दशरथ के पुत्र थे। वह अयोध्या के राजा थे। उनकी पत्नी का नाम सीता था। लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न उनके भाई थे। कौशल्या राम की माता थीं।

अपने भाइयों से लक्ष्मण के समान प्यार करो। भगवान् राम के अनुचर हनुमान् की तरह पवित्र और वीर बनो।

अयोध्या के दर्शन कर आओ। अयोध्या एक तीर्थ-स्थान है। सरयू नदी में स्नान करो। अपने माता-पिता से कहो कि वे तुम्हें अयोध्या ले जायें।

(अनुवादक : श्री त्रि. न. आत्रेय)

योग द्वारा स्वास्थ्य :

कपालभाति

परम पावन श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज

'कपाल' का अर्थ है ललाट तथा 'भाति' का अर्थ है चमकना। यह व्यायाम कपाल को स्वच्छ करता है। इस प्रकार यह एक शुद्धिकारक व्यायाम हो जाता है। इसका नियमित अभ्यास अभ्यासकर्ता को देदीप्यमान मुख (चेहरा) प्रदान करता है। यह साधक को भस्त्रिका-प्राणायाम के अभ्यास के लिए तैयार करता है।

विधि

बैठने वाले आसनों में से किसी एक में बैठें और मेरुदण्ड तथा ग्रीवा सीधी रखें। निम्न पेडू को थोड़ा क्रियाशील करने के साथ ही नासारन्ध्रों से शीघ्र-शीघ्र रेचक करें। नासाग्र पर मन एकाग्र करें। आपको चेहरे की मांसपेशियों को सिकोड़ना नहीं चाहिए। प्रत्येक रेचक के पश्चात् लघु पूरक करना चाहिए। प्रारम्भ करने के लिए आप एक रेचक प्रति सेकण्ड की गति से कर सकते हैं और आप एक या दो आवर्तन का अभ्यास कर सकते हैं। प्रत्येक आवर्तन आठ या दश रेचकों का हो। प्रत्येक आवर्तन के पश्चात् सामान्य श्वास-प्रश्वास के साथ विश्राम करें। जब व्यक्ति अभ्यास में पर्याप्त प्रगति कर ले, तो वह प्रत्येक आवर्तन में १२० रेचक तक पहुँचने तक प्रत्येक आवर्तन में दश रेचक की दर से प्रति सप्ताह वृद्धि कर सकता है। प्रातः और सायं दो या तीन आवर्तन किये जा सकते हैं।

लाभ

यह व्यायाम कपाल, श्वास-तन्त्र और नासा-पथों को स्वच्छ करता है। यह श्लेष्मा के रोगों को नष्ट करता है तथा श्वास-नली की ऐंठन को दूर करता है। परिणामतः दमा में आराम और आरोग्यता भी प्राप्त होती है। रुधिर की अशुद्धता भी निर्गत हो जाती है। हृदय समुचित रूप से कार्य करने लगता है। रक्तवह-तन्त्र, श्वास-यन्त्र और पाचन-प्रणाली पर्याप्त मात्रा में आरोग्य हो जाते हैं।

(अनुवादक : श्री शिवगोविन्द गुप्त)

आपने अपने आध्यात्मिक स्वभाव को, अपने आत्म-तत्त्व (जो कि ब्रह्म ही है) को जिस प्रकार धरोहर के रूप में ही प्राप्त किया है, उसी प्रकार से भगवान् की भ्रमित करने वाली शक्ति 'माया' को भी धरोहर के रूप में प्राप्त किया है। यदि आप इसके साथ सावधानी से, सही और समुचित ढंग से व्यवहार नहीं करते तो बस सब समाप्त ही समझें।

आप तीन-तीन पी-एच. डी. किये हुए हो सकते हैं, आप अत्यधिक ज्ञानी भी हो सकते हैं; किन्तु जो माया के जाल में जकड़े हुए होते हैं, वे नहीं जानते कि वे माया-जाल में फँसे हुए हैं। वह तो समझते हैं कि वह ठीक-ठाक हैं, कि वह उन लोगों में से हैं जो दूसरों को सिखाने वाले हैं कि माया से परे कैसे जाया जा सकता है। यह भी अपने-आपमें 'माया में जकड़ा हुआ होना' ही है।

स्वामी चिदानन्द

बाल-स्तम्भ :

घर बैठे तीर्थयात्रा

स्वामी रामराज्यम्

एक बार गणेश जी हठ करने लगे कि मैं विवाह करूँगा। पार्वती जी बोलींह्न ''जल्दी क्या है? स्कन्द तुमसे बड़ा है। पहले उसका विवाह हो जाने दो।''

स्कन्द ने यह बात सुनी तो बोल पड़ेह्न ''नहीं, पहले मैं विवाह करूँगा।''

दोनों भाई अपनी-अपनी बात पर अड़ गये। विवाद सुलझने की कोई आशा न देख कर पार्वती जी ने शिव जी से कहाह्न ''आप ही इस झगड़े को निपटाइए।''

शिव जी पुत्रों से बोलेह्न ''तुम दोनों को एक परीक्षा देनी होगी। जो कोई इस परीक्षा में उत्तीर्ण हो जायेगा, उसका विवाह पहले कर दिया जायेगा।''

फिर शिव जी ने परीक्षा के विषय में बतलायाह्न ''तुम दोनों को पृथ्वी की परिक्रमा करनी है। जो कोई इस परिक्रमा को पूरी करके पहले लौट आयेगा, उसको परीक्षा में उत्तीर्ण माना जायेगा।''

स्कन्द मोर की अपनी सवारी पर सवार हो कर पृथ्वी की परिक्रमा करने निकल पड़े।

गणेश जी चुपचाप खड़े रहे।

पार्वती जी ने पूछाह्न ''तुझे नहीं देनी है परीक्षा?''

''हाँ, देनी है,'' यह कह कर गणेश जी चले गये। थोड़ी देर में पूजा-सामग्री से भरी हुई थाली लिये हुए आये। उन्होंने माता-पिता की विधिवत् पूजा कीह्नचन्दन लगाया, फूल अर्पित किये, भोग लगाया और साष्टांग प्रणाम किया। फिर सात बार माता-पिता की परिक्रमा की। अन्त में बोलेह्न ''अब करो मेरा विवाह।''

शिव जी बोलेह्न ''पृथ्वी की परिक्रमा कब पूरी करोगे?''

''हो गयी परिक्रमा पूरी। माता-पिता की परिक्रमा करके पृथ्वी की परिक्रमा नहीं हो जाती है क्या?''

गणेश जी का उत्तर अकाट्य था। शिव जी और पार्वती जी उनकी ओर गद्गद हो कर देखने लगे।

बच्चो, माता-पिता साधारण प्राणी नहीं होते। वे धरती-लोक में दिखायी पड़ने वाले चलते-फिरते भगवान् हैं। वे तीर्थ के समान होते हैं। उनका मान-सम्मान करना किसी तीर्थस्थान की परिक्रमा करने के समान होता है। इतने महान् तीर्थ हैं वे कि उसकी परिक्रमा करने से समूची धरती की परिक्रमा करने का फल मिल जाता है।

बच्चो, अपने-अपने से पूछनाह्नइन भगवानों को हम पूरी-पूरी श्रद्धा दे रहे हैं कि नहीं। उनके आदेशों का पालन करने में हम चूक तो नहीं रहे हैं? उनकी सेवा-पूजा करके घर-बैठे तीर्थयात्रा का पुण्य प्राप्त करने में हम किसी से पीछे तो नहीं हैं?'' □□□

समाचार और प्रतिवेदन

मुख्यालय से समाचार

'शिवानन्द होम' द्वारा सेवा

दिव्य जीवन संघ मुख्यालय द्वारा प्रारम्भ किया गया 'शिवानन्द होम' एक ऐसा संस्थान है जहाँ निर्धन, पीड़ित और जरूरतमन्द ऐसे लोगों की सेवा का विनम्र प्रयास किया जाता है, जिन्हें मेडिकल सहायता की आवश्यकता है किन्तु साधन नहीं है, जिन्हें न किसी मनुष्य की सहायता उपलब्ध है, न सिर छिपाने को छत है, ऐसे बेघरबार रोगी जो संक्रामक रोगों से ग्रसित हैं किन्तु उनकी देख-रेख करने वाला कोई नहीं है।

जरूरतमन्द और दरिद्र! यह निर्धन-दरिद्र कहलाने वाले लोग कौन हैं? और किस पहलू से यह अभावग्रस्त हैं? 'होम' के कुछेक अन्तेवासियों के जीवन की झाँकी लेना रुचिकर होगा। ऐसी दिव्यात्माओं से मिलना वास्तव में सौभाग्य ही है, जो लौकिक सम्पत्ति की दृष्टि से भले ही निर्धन रहे हों, किन्तु जिनके हृदय में ऐसा खजाना है जो और किसी भी तरह की सम्पत्ति से मूल्यवान् है। उदाहरण के लिए हम प्यार से 'दादा जी' के नाम से जाने जाने वाले एक अन्तेवासी के जीवन में झाँक कर देखें। वह एक बुजुर्ग कुष्ठरोगी हैं, दोनों टाँगों पर पुराने घाव हैं, अपने निकट-सम्बन्धियों द्वारा उन्हें त्याग दिया गया है। कूल्हे की हड्डी टूटी हुई होने के कारण यह पूरी तरह शैय्याग्रस्त हैं, आँतों के रोग तथा औस्टिओपोरोसिस (अस्थिछिद्रलता) आदि रोगों से ग्रस्त होने के कारण स्नान आदि नित्य क्रियाओं के लिए दूसरों की सहायता लेनी पड़ती है। इन सब कष्टों में भी हर समय चेहरे पर मुस्कान लिये हुए उन्हें किसी-न-किसी काम में व्यस्त देखा जा सकता है। अन्य सभी अन्तेवासियों की आवश्यकताओं से पूरी तरह परिचित, उनकी कठिनाइयों, उनकी उलझनों को समझते हुए, आवश्यकता पड़ने पर उनकी ओर से बात करते हुए और प्रेम से बोलते हुए ही पायेंगे उन्हें। उनका खाली समय धर्मग्रन्थ पढ़ने में या पड़ोसी को भी पढ़ कर सुनाने में बीतता है। उनका पड़ोसी पक्षाघात का रोगी है, अतः बोलने में असमर्थ है।

'दादा जी' की लाचारी हरेक को सहायता या सलाह के लिए बुलावा देती है। उनके मुख से आज तक शिकायत का एक शब्द भी सुना नहीं गया, मौन भाषा में अपने दुःख की अभिव्यक्ति करते हों, यह तो भगवान् ही जानते हैं! किन्तु उनके हृदय का खजाना उनकी आँखों से झलकता है और उनके पूरे व्यक्तित्व में दिखलायी देता है, उनकी निर्धनता क्या है? हमारी निर्धनता क्या है? जो दूसरों को निर्धन और जरूरतमन्द कहते हैं, उनकी निर्धनता क्या है? 'दादा जी' जैसे व्यक्ति उन लोगों के लिए वास्तविक उदाहरण हैं जो सेवा करने का प्रयत्न करते हैं, जो अपने मन को शान्त करना चाहते हैं, जो शान्ति और सुस्थिरता प्राप्त करना चाहते हैं। वह उदाहरण हैं कि 'शिवानन्द होम' में किस दृष्टिकोण से सेवा की जाती है, एकत्व की भावना से, एक-दूसरे को प्रेरित और सक्रिय करते हुए; उसे सहायक कह लें या रोगी कह लें क्योंकि हममें से हर एक भीतर से कुछ सीमा तक रोगी और कुछ सीमा तक सहायक है : सभी उस परमात्मा के उपकरण भी हैं और उनके रोगी भी हैं।

''एक भक्त के हृदय में, एक श्रद्धालु के हृदय में यह दृढ़ धारणा होनी चाहिए : 'जब भगवान् मेरे पास हैं, तो मुझे किस चीज की कमी है? भले ही यदि मेरे पास संसार की सारी सम्पदा हो; परन्तु भगवान् नहीं हैं, तो कुछ नहीं है, तब तो मैंने सब-कुछ गँवा दिया, मैं नष्ट ही हो गया। किन्तु यदि मेरे भगवान् मेरे पास हैं, फिर चाहे सारा जगत् मेरे विपरीत हो जाये, तो भी मेरे पास सब-कुछ है, मैंने कुछ नहीं खोया है।' यह एक शाश्वत सत्य है : जो व्यक्ति भगवान् पर भरोसा रखता है, भगवान् उसके लिए कोई कमी नहीं रहने देते।''

(श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज)

''भूखे को भोजन दें! नग्न को वस्त्र दें! रोगियों की सेवा करें! यही दिव्य जीवन है।'' **स्वामी शिवानन्द**

श्री रामनवमी महोत्सव

आश्रम मुख्यालय में ३ अप्रैल को महान् अवतार, मर्यादा पुरुषोत्तम श्री रामचन्द्र की जन्म जयन्ती, श्री रामनवमी का महोत्सव मनाया गया। महोत्सव के मंगलाचरण अथवा शुभारम्भ के रूप में १२ मार्च से २९ मार्च तक आश्रम के अन्तेवासी संन्यासियों, ब्रह्मचारियों और अतिथियों ने श्री वाल्मीकि रामायण (मूल पाठ) का पारायण किया। पावन मन्त्र 'श्री राम जय राम जय जय राम' का समवेत स्वर में संकीर्तन २९ मार्च से २ अप्रैल २००९ तक किया गया। श्री रामनवमी के दिन पावन समाधि मन्दिर में प्रातःकालीन ब्राह्ममुहूर्त में विशेष प्रार्थना और ध्यान सत्र हुआ। उसके तुरन्त बाद आश्रम की परिक्रमा करते हुए गुरुदेव कुटीर तक सामूहिक संकीर्तन सहित प्रभातफेरी निकाली गयी जो ७ बजे श्री विश्वनाथ मन्दिर में पहुँच कर सम्पूर्ण की गयी। श्री विश्वनाथ मन्दिर की यज्ञशाला में विश्व-शान्ति और सर्व-कल्याण के लिए हवन किया गया। प्रातः ९ बजे से अपराह्न १२ बजे तक विशेष प्रार्थना, भजन-कीर्तन, भगवान् श्री रामचन्द्र का अभिषेक, अर्चना इत्यादि की गयी। १२ बजे आरती के साथ यह विशेष पूजा सम्पन्न की गयी। महा आरती के पश्चात् बड़ी संख्या में आये हुए अतिथि भक्तों तथा आश्रमवासियों के लिए अन्नपूर्णा में आज के दिन विशेष रूप से बनाया गया प्रसाद वितरित किया गया। रात्रि के विशेष सत्संग में श्रद्धेय श्री स्वामी पद्मनाभानन्द जी महाराज तथा श्री हरिहर सिंह जी ने भगवान् श्री रामचन्द्र जी के दिव्य गुणों पर प्रकाश डालते हुए रामायण पर प्रवचन दिये। आरती के उपरान्त सत्संग सम्पन्न हुआ।

परम पूज्य श्री स्वामी निर्लिप्तानन्द जी महाराज (उपाध्यक्ष) की सांस्कृतिक यात्रा

दिव्य जीवन संघ मुख्यालय के उपाध्यक्ष परम पूज्य श्री स्वामी निर्लिप्तानन्द जी महाराज मार्च माह में उड़ीसा की सांस्कृतिक यात्रा पर गये।

४ मार्च को स्वामी जी महाराज बालिगुआली गाँव में गये। इस गाँव के निकट ही दिव्य जीवन संघ मुख्यालय का ही एक हिस्सा चिदानन्द तपोवन शान्ति आश्रम, बालिगुआली स्थित है। स्वामी जी महाराज ने वहाँ यज्ञ कार्यक्रम में भाग लिया, जो कि गाँव में स्थित श्री श्री ग्रामेश्वर महादेव मन्दिर में भगवान् शिव की मूर्ति-स्थापना के सम्बन्ध में सम्पन्न किया गया था। इस अवसर पर आयोजित सत्संग में एकत्रित भक्तों

को सम्बोधित करते हुए स्वामी जी महाराज ने आशीर्वचन दिये। पूज्य श्री स्वामी जितमोहनानन्द जी महाराज, प्रभारी, बालिगुआली आश्रम तथा अन्य भक्तजन भी स्वामी जी महाराज के साथ थे।

स्वामी जी महाराज ३ से १४ मार्च तक शान्ति आश्रम, बालिगुआली में रहे। ७ मार्च को आश्रम में ही बालिगुआली ग्रामवासियों की सभा थी। इसमें सम्माननीय गजपति महाराज श्री दिव्य सिंह देव, पुरी; माननीय बाबा चैतन्य चरण दास जी महाराज, भागवत आश्रम, पुरी; आदरणीय श्री स्वामी सेवानन्द जी महाराज, ऋषिकेश मुख्यालय आश्रम तथा अन्य महत्त्वपूर्ण स्वामीजीओं और भक्तजनों ने भाग लिया। श्री स्वामी जी महाराज ने इस सभा की अध्यक्षता की। इस सभा में ग्रामवासियों के साथ परस्पर सम्बन्ध इत्यादि से सम्बन्धित तथा अन्य अनेक महत्त्वपूर्ण पहलुओं पर विचार-विमर्श तथा निर्णय किये गये।

८ से १२ मार्च २००९ तक स्वामी जी महाराज ने बालिगुआली आश्रम में साधना गंगा के अन्तर्गत निर्धारित कार्यक्रमों में आयोजित मासिक साधना शिविर में भाग लिया। इसमें अंगुल और ढेंकानाल जिले के बहुत से भक्त तथा अन्य साधक सम्मिलित हुए। स्वामी जी महाराज ने प्रातः कालीन ध्यान सत्र में, तथा उसके तुरन्त बाद साधना के विभिन्न पहलुओं पर प्रवचन देते हुए भाग लिया। इन सभी दिनों में स्वामी जी महाराज ने भगवद्गीता पर भी प्रवचन दिये।

दिव्य जीवन संघ मंदासाहि शाखा ने, शाखा में स्थित मन्दिर में भगवान् शिव की मूर्ति स्थापना के शुभ अवसर पर ४ से ९ मार्च तक मंदासाहि गाँव में दैनिक सत्संग का आयोजन किया था। स्वामी जी महाराज ५ मार्च के सत्संग में सम्मिलित हुए और भक्तों को सम्बोधित करते हुए प्रवचन दिये।

गीता मन्दिर, पण्डारा, भुवनेश्वर के आदरणीय श्री स्वामी जिज्ञासानन्द जी महाराज द्वारा आयोजित श्रीमद्-भगवद्गीता स्वाध्याय महायज्ञ में स्वामी जी महाराज ने भाग लिया। इस स्वाध्याय महायज्ञ में सम्पूर्ण गीता का पारायण करना था। इसमें भुवनेश्वर के लगभग १००० भक्तों ने भाग लिया। यह अत्यन्त सुन्दर कार्यक्रम रहा जो बहुत ही लाभप्रद और आत्म-प्रेरक रहा। स्वामी जी महाराज ने पारायण में भी भाग लिया तथा गीता की महिमा और महत्त्व पर प्रवचन भी दिये।

१४ से १६ मार्च तक स्वामी जी महाराज शिवानन्द सैंटेनरी बौइज़ हाई स्कूल, खण्डगिरि, भुवनेश्वर भी गये। स्कूल की प्रबन्धक कमेटी की मीटिंग में भी स्वामी जी महाराज ने भाग लिया तथा विद्यालय के विद्यार्थियों को आशीर्वचन भी दिये।

१९ मार्च को जयदेव भवन, भुवनेश्वर में ह्यूमेन रिसोर्सिज डेवलेपमेंट (मानव संसाधन विकास) के निर्देशन के लिए स्वाध्याय परिवार, भुवनेश्वर तथा प्रजापिता ब्रह्मकुमारी ईश्वरीय विश्वविद्यालय ने मिल कर एक-साथ भगवद्गीता पर एक विचारगोष्ठी का आयोजन किया था। भुवनेश्वर नगर के बुद्धिजीवी, भुवनेश्वर मैनेजमैंट स्कूलज़ के विद्यार्थी और अध्यापक सभी ने इसमें भाग लिया। इस अवसर पर स्वामी जी महाराज मुख्य प्रवक्ता थे। स्वामी जी महाराज ने तदनुकूल विषय पर प्रवचन दिया जिसे अत्यन्त भली-भाँति ग्रहण किया गया।

२१ मार्च को स्वामी जी महाराज ने दिल्ली में ट्रस्ट बोर्ड ऑफ स्वामी शिवानन्द मैमोरियल ट्रस्ट की मीटिंग में भाग लिया, जिसके कि स्वामी जी महाराज चेयरमैन हैं।

आध्यात्मिक साधना जो परोपकार, ईश्वर-भक्ति और परम सत्ता के चिन्तन का संश्लेषण है, जीवन के प्रत्येक रोग की अचूक औषध है। **स्वामी कृष्णानन्द**

आवश्यक सूचना

शिवानन्द आश्रम, दिव्य जीवन संघ मुख्यालय, ऋषिकेश में अतिथियों एवं अभ्यागतों-आगन्तुकों के स्वागतार्थ वर्तमान समय की माँग तथा सरकारी एजेंसियों की अपेक्षाओं-आदेशों के अनुसार हम कुछ नियमों-शर्तों के परिपालन के लिए बाध्य हैं।

शिवानन्द आश्रम मूलतः संन्यास आश्रम/एक आध्यात्मिक संस्था है, जहाँ के अन्तेवासी संन्यासी, ब्रह्मचारी और आध्यात्मिक साधना में रत साधक हैं। वे निष्काम सेवा करते हैं और दिनानुदिन के कार्यक्रमों में सामूहिक रूप से सम्मिलित हो कर तथा अपनी आध्यात्मिक साधना की तरंगों से तरंगित वातावरण को तथा आश्रम की पवित्रता को बनाये रखने में प्रयत्नशील रहते हैं।

आश्रम में कुछ समय ठहरने वाले अतिथियों एवं अभ्यागतों से आशा की जाती है कि वे आश्रम के आध्यात्मिक वातावरण के अनुकूल ही अपनी आश्रमवास-अवधि का आध्यात्मीकरण करें। पर्यटकों, सप्ताहान्त छुट्टी मनाने वालों तथा मात्र मौजमस्ती करने वालों को आश्रम में ठहरने की सुविधा प्राप्त करने की प्रत्याशा नहीं रखनी चाहिए। वे किसी अन्य स्थान पर ठहरें और आश्रम-दर्शनार्थ तथा प्रार्थना, ध्यान तथा योग आदि के लिए ही आश्रम में आयें।

अतिथियों तथा अभ्यागतों के लिए दिशा-निर्देशन

(१) अतिथियों तथा अभ्यागतों को आश्रम में ठहरने की पूर्व-अनुमति प्राप्त करने के लिए महासचिव को पत्र, ई-मेल आदि के द्वारा पर्याप्त समय पूर्व अग्रिम सूचना देनी होगी, ताकि वे रवाना होने से पूर्व ही अनुमति-पत्र प्राप्त कर सकें। आश्रम-वास की अनुमति-प्राप्ति के लिए आवेदन-पत्र का प्रारूप निम्नलिखित अनुसार होगा :

१. पूरा नाम

२. लिंग और आयु

३. राष्ट्रीयता

४. निवास-स्थान/घर का पूरा पता

५. ई-मेल का पता

६. कोड सहित टेलीफोन/सैल नम्बर

७. पासपोर्ट/फोटो आइडी टाइप और नम्बर*

८. आपके परिचित आश्रमवासी का नाम/सम्बन्ध

* स्वागत-कार्यालय (Reception Office) में पहुँचने पर आपको पासपोर्ट अथवा कोई फोटो पहचान-पत्र अवश्यमेव प्रस्तुत करना होगा। यह सरकारी नियमानुसार आवश्यक जरूरत है।

९. व्यवसाय-नौकरीपेशा तथा संक्षिप्त आध्यात्मिक पृष्ठभूमिका

१०. क्या आप दिव्य जीवन संघ से सम्बद्ध हैं? तो किस रूप में, कैसे?

११. आगमन का उद्देश्य

१२. आपके साथ आने वालों की संख्या (उनके नाम, लिंग और आयु उल्लेख सहित)

१३. आगमन की तिथि-तारीख

१४. प्रस्थान की तिथि-तारीख

(२) आश्रम-आवास के लिए फोन पर अनुमति लेना मान्य नहीं होगा।

(३) अतिथियों तथा अभ्यागतों को स्वागत-कार्यालय द्वारा जो आवास-स्थान दिया जायहृहृपूर्ण सहयोग सहित उसके साथ उन्हें एडजस्ट करना होगा।

(४) आश्रम-वास करते हुए अतिथियों तथा अभ्यागतों को आश्रम के समस्त कार्यक्रमों में उपस्थित रहना होगा; विशेष रूप से प्रातः ध्यान-कक्षा में और रात्रि-सत्संग में।

(५) अतिथियों-अभ्यागतों को अपने मूल्यवान् सामान का ध्यान स्वयमेव रखना होगा। किसी भी प्रकार की हानि-नुकसान के लिए आश्रम-प्रबन्धन उत्तरदायी नहीं होगा।

(६) स्वागत-कार्यालय का नियत कार्य-समय प्रातः ६ बजे से रात्रि १० बजे तक है। रात्रि १० बजे से प्रातः ६ बजे तक कार्यालय बन्द रहेगा। अतः अतिथियों-अभ्यागतों से अनुरोध है कि वे अपनी यात्रा का कार्यक्रम इस प्रकार सुनिश्चित करें कि वे स्वागत-कार्यालय के कार्य-समय के अन्दर ही आश्रम में पहुँचें।

(७) बिना पूर्व-सूचना दिये एवं पूर्व-अनुमति लिये आश्रम में ठहरने हेतु आने वाले अतिथियों तथा अभ्यागतों के अनुरोध पर गौर नहीं किया जायेगा।

दिव्य जीवन संघ की शाखाओं के लिए सूचना

शिवानन्द आश्रम, दिव्य जीवन संघ मुख्यालय, ऋषिकेश आने वाले अतिथियों-अभ्यागतों की सिफारिश करने वाली शाखाओं से अनुरोध है कि वे उपर्युक्त दिशा-निर्देशों का अनुपालन करें।

शाखाएँ अपने सदस्यों/भक्तों का आश्रम मुख्यालय में आने के लिए सिफारिश सदा कर सकती हैं, किन्तु पूर्व अग्रिम सूचना देने और अनुमति-स्वीकृति-प्राप्ति सुनिश्चित हो।

बिना पूर्व-सूचना दिये एवं पूर्व-अनुमति प्राप्त किये शाखाओं से सिफारिशी पत्र लाने पर भी मुख्यालय में आवास-उपलब्धि हेतु आने वाले सदस्यों, भक्तों, अतिथियों और अभ्यागतों को आश्रम में ठहरने की (स्वीकृति) अनुमति प्राप्त नहीं हो सकेगी।

द डिवाइन लाइफ सोसायटी

पावन-स्मृति में

(श्री स्वामी शिवकृपानन्द जी महाराज)

अत्यन्त शोक सहित हम श्रद्धेय श्री स्वामी शिवकृपानन्द जी महाराज की शुक्रवार, ३ अप्रैल २००९ को स्वामी शिवानन्द सैंटेनरी हॉस्पिटल, पत्तमडै, तमिल नाडु में रात्रि १२.३० पर महासमाधि होने की सूचना दे रहे हैं।

स्वामी जी पूर्वाश्रम में श्री एस. आर. बालाकृष्णन नाम से जाने जाते थे और भारतीय रेल विभाग में एक निष्कपट कर्मचारी थे। परम पूज्य गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज के महिमामय दर्शन प्राप्त करने का उनको सौभाग्य मिला था। परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज द्वारा १९८३ में वह पावन संन्यास-परम्परा में दीक्षित हुए। दीर्घ काल से वह दिव्य जीवन संघ, पत्तमडै शाखा में तथा गुरुदेव के पावन मन्दिर में अत्यन्त श्रद्धाभक्तिपूर्वक सेवा कर रहे थे। ९१ वें वर्ष की परिपक्व आयु में उन्होंने शरीर छोड़ा। परम पूज्य गुरुदेव तथा भगवान् अपने चरणों में रखते हुए उनकी आत्मा को परम शान्ति प्रदान करें!

द डिवाइन लाइफ सोसायटी

आराधना के अवसर पर विशेष छूट

१ मई २००९ से ३० सितम्बर २००९ तक

पुस्तकों पर छूट

३०० रु. तक की पुस्तकों के आर्डर पर २०%
१००० रु. तक की पुस्तकों के आर्डर पर ३०%
१००० रु. से अधिक की पुस्तकों के आर्डर पर ३५%

पूज्य गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी और पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी की निम्नलिखित चित्रात्मक पुस्तकों पर ४०% विशेष छूट दी जायेगी।

(चित्रात्मक पुस्तकों पर यह छूट ३० सितम्बर या जब तक पुस्तकें उपलब्ध हैं, तब तक दी जायेगी।)

1. ES8	Glorious Vision	(A Pictorial Volume)	Rs. 650/-
2. ES4	Gurudev Sivananda	(A Pictorial Volume)	Rs. 250/-
3. EC70	Ultimate Journey	(A Pictorial Volume)	Rs. 500/-
4. EC71	Divine Vision	(A Pictorial Volume)	Rs. 300/-

सभी आर्डरों के साथ ५०% अग्रिम धन-राशि भेजें।
यह विशेष छूट केवल भारत में ही भेजने के लिए उपलब्ध है।

द डिवाइन लाइफ सोसायटी, द शिवानन्द पब्लिकेशन लीग
पोस्ट : शिवानन्दनगरह्रह्र२४९१९२, जिला : टिहरी-गढ़वाल, उत्तराखंड, भारत
फोन : (९१) ०१३५-२४३४७८०, २४३००४०; E-mail: bookstore@sivanandaonline.org

कृष्णानन्द-वाणी

सृष्टि में आपका स्थानकहाँ है? (८)

गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज के प्रमुख उपदेश को याद रखेंह्नह्न''सर्वप्रथम ईश्वर, तत्पश्चात् जगत् और सबसे अन्त में स्वयं आप।'' पहले कौन? पहले आता है ईश्वर, तत्पश्चात् आता है जगत् और सबसे अन्त में आप।'' अतः आप ऐसा न कहें कि सर्वप्रथम मैं। अपनी सत्ता को आगे न रखें। सृष्टि में तो आपका स्थान अन्तिम है। आपसे पहले विश्व की रचना हुई थी और उससे पूर्व ईश्वर था; अतः कारण को पूर्णता दें, कार्य को नहीं। अहर्निश सावधान रहें। सेवाभाव से आध्यात्मिक पथ के साधक के रूप में जीवन-यापन करें, मानव-रूपी भगवान् की यथाशक्ति सेवा करें तथा ईश्वर के साक्षात्कारार्थ संयमपूर्ण जीवन व्यततीत कर तप द्वारा आत्मशोधन करें।

ह्नह्नस्वामी कृष्णानन्द

समस्त प्रवृत्तियों का परमाधारह्नह्नईश्वर-साक्षात्कार १७

जीवन का मुख्य ध्येय ईश्वर का साक्षात्कार करना है; अतः विश्व की अन्य समस्त प्रवृत्तियाँ इस उद्देश्य को दृष्टिगत रख कर इसकी पूर्व-तैयारी के रूप में होनी चाहिए। इस संसार में आपके सभी कार्य तथा यहाँ के आपके सभी कर्तव्य ईश्वर के साक्षात्कार के लिए पूर्व-तैयारी के रूप में तथा तदर्थ शुद्धिकरण के रूप में होने चाहिए। ह्नह्नस्वामी कृष्णानन्द

हमारी नियति का आधार १७

हमारा महत्त्व तथा सुख सदा इस बात पर निर्भर नहीं करना चाहिए कि दूसरे हमारे विषय में क्या सोचते अथवा अनुभव करते हैं। हमारी नियति, हम भगवान् की दृष्टि में जो-कुछ हैं, इस पर निर्भर करती है। अपना कर्तव्य करें, भले ही संसार हमारा सम्मान न करे।

जीवन-रोगों की अचूक औषध

आध्यात्मिक साधना को परोपकार, ईश्वर-भक्ति और परम सत्ता के चिन्तन का संश्लेषण है, जीवन के प्रत्येक रोग की अचूक औषध है। ह्नह्नस्वामी कृष्णानन्द

'कुछ-नहीं' या 'सब-कुछ'

अहंमन्यता के अस्तित्व को मिटाना अपने अस्तित्व के मिटाने के समान प्रतीत होता है। लगता है कि व्यावहारिक रूप से हम बिलकुल समाप्त हो रहे हैं। हम 'कुछ-नहीं' हो गये हैं। परन्तु यह सत्य है कि बाह्य रूप से दुःखदायी लगने वाली यह प्रक्रिया आपके 'सब-कुछ' होने का मार्ग प्रशस्त करती है।

रामायण का सार

भगवान् राम हरि के अवतार हैं। दुष्ट रावण ऋषियों को सताया करता था। उसका संहार करने के लिए राम ने जन्म लिया। रावण लंका (जिसे आजकल श्रीलंका कहते हैं) का राजा था।

भरत की माता कैकेयी ने राम को वन में भेजा। राम अपनी पत्नी सीता और भाई लक्ष्मण के साथ दण्डक-वन गये। रावण साधु के वेश में आया और सीता जी का हरण कर ले गया। राम ने सुग्रीव के साथ मित्रता की। हनुमान् राम के सेवक और दूत बने।

राम और रावण के बीच भयंकर युद्ध हुआ। राम ने रावण का संहार किया और सीता को वापस ले आये। राम अपने साथियों-सहित अयोध्या लौट आये। वह अयोध्या के राजा बने। उनका राज्य रामराज्य कहलाता था। रामराज्य में सर्वत्र सुख, शान्ति और समृद्धि थी।

जपयोग-समीक्षा

परम श्रद्धेय श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज

जप क्या है?

जप किसी मन्त्र अथवा ईश्वर के नाम को बार-बार दोहराने को कहते हैं। इस कलियुग में, जब कि अधिकतर व्यक्तियों का शरीर-बल पहले जैसा नहीं रहा, हठयोग का अभ्यास केवल कठिन ही नहीं, असम्भव है। ईश्वर-दर्शन का सर्व-सुगम मार्ग केवल जप-साधना ही है। सन्त तुकाराम, भक्त ध्रुव, प्रह्लाद, वाल्मीकि, रामकृष्ण परमहंस इत्यादि सभी ने केवल ईश्वर का नाम जप कर ही उनका साक्षात्कार किया।

जपयोग योग-साधना का एक मुख्य अंग है। गीता में भगवान् कहते हैं कि यज्ञों में मैं जप-यज्ञ हूँ अर्थात् यज्ञों में सबसे बड़ा यज्ञ जप है और वह मैं हूँ। कलियुग में केवल जप ही हमें शाश्वत शान्ति प्रदान कर सकता है। इसी से हमको अमरत्व, मोक्ष तथा परम सुख प्राप्त हो सकता है। जप के निरन्तर अभ्यास से साधक समाधि का अनुभव करने लगता है और उसे भगवद्-साक्षात्कार हो जाता है। जप हमारे दैनिक जीवन की प्रत्येक कला का एक अंग ही बन जाना चाहिए। यदि हम निरन्तर जप का अभ्यास करते रहेंगे, तो एक-न-एक दिन जप हमारे स्वभाव में ओत-प्रोत हो जायेगा, फिर हमें जप करने में किसी प्रकार की कठिनाई का अनुभव नहीं होगा (जैसे हमें खाने, पीने और पहनने में किसी प्रकार की कठिनाई का अनुभव नहीं होता है)। ईश्वर के नाम का जप प्रेम, श्रद्धा तथा पवित्रता की भावना के आधार पर करना चाहिए। जपयोग से श्रेष्ठतर और कोई भी योग नहीं है। जपयोग में सफलता मिलने पर सभी सिद्धियाँ प्रत्यक्ष होने लगती हैं और भक्त मुक्ति की प्राप्ति कर लेता है।

जप किसी मन्त्र के बार-बार उच्चारण को कहा जाता है। ध्यान का अर्थ हैह्वह्वईश्वर के गुणों का ध्यान करना। जप और ध्यान में यही अन्तर है। ध्यान का अभ्यास जप-सहित और जप-रहितह्वह्वदोनों प्रकार से किया जाता है। आरम्भ में जप-सहित ध्यान करना चाहिए। जैसे-जैसे ध्यान करने का अभ्यास बढ़ता जायेगा, जप अपने-आप ही विलीन हो जायेगा। इस प्रकार जप-रहित ध्यान का आविर्भाव होता है। किन्तु यह बहुत ऊँची अवस्था है। साधारण कोटि के व्यक्तियों के लिए यह निरन्तर अभ्यास द्वारा सुलभ है। जब आप इस अवस्था को प्राप्त कर लेंगे, तब आप सुगमतापूर्वक ध्यान लगा सकते हैं; आपको जप की आवश्यकता प्रतीत नहीं होगी। प्रणव के दो रूप होते हैंह्वह्वसगुण और निर्गुण। दोनों ब्रह्म के ही रूप हैं। यदि तुम राम के भक्त हो, तो **'ॐ राम'** का जप कर सकते हो। **'ॐ राम'** का जप वास्तव में सगुण ब्रह्म की उपासना है।

यद्यपि नाम और रूप भिन्न-भिन्न माने जाते हैं, किन्तु वैसे इनको अलग नहीं किया जा सकता। विचार तथा शब्द अभिन्न हैं। जब तुम अपने पुत्र के बारे में विचार करते हो, तो तुरन्त कल्पना में उसका रूप तुम्हारे सामने आ जाता है। इसी प्रकार जब तुम उसके

रूप की कल्पना करते हो, तो उसके नाम की याद भी स्वतः ही आ जाती है। इसी प्रकार जब तुम राम का नाम लेते हो, तो राम का रूप तुम्हारे सम्मुख आ जाता है। अतः हम इसी बिन्दु पर पहुँचते हैं कि ध्यान और जप एक-साथ रहते हैं। हम ध्यान और जप को अलग-अलग नहीं कर सकते।

जब तुम किसी मन्त्र का जप कर रहे हो, तो यह समझो कि तुम वास्तव में इष्टदेवता की प्रार्थना कर रहे हो; वह तुम्हारी प्रार्थना को सुन रहा है; वह तुम्हारी ओर दया-दृष्टि से देख रहा है और वह तुम्हें अपने हाथों से अभय-दान दे रहा है, जिससे तुम मोक्ष की प्राप्ति करने में सफल बन सको। ऐसी ही भावना से तुम्हें जप करना चाहिए।

जप-साधना भावनापूर्वक करनी चाहिए। मन्त्र का अर्थ समझना चाहिए। प्रत्येक वस्तु तथा स्थान पर ईश्वर को व्यापक देखो। जब तुम उसके नाम का जप करते हो, तो तुम उसके अधिक समीप हो। तुम उसे अपने हृदय-मन्दिर में व्यापक देखने की चेष्टा करो। ऐसा विचार करो कि वह तुम्हारे प्रत्येक कार्य को देखता हैह्लह्लअतः वह तुम्हारे जप को भी देख रहा है।

हमें ईश्वर का नाम पूर्ण विश्वास के साथ गम्भीरतापूर्वक लेना चाहिए। उसका नाम लेना उसकी सेवा करना है। जप करते समय तुम्हारे हृदय में ईश्वर के लिए वही प्रेम और सम्मान होना चाहिए, जो उसके दर्शनों पर तुम्हारे हृदय में उत्पन्न होता है। तुम्हें नाम में पूर्ण विश्वास तथा श्रद्धा होनी चाहिए।

मन्त्रयोग

मन्त्रयोग एक प्रकार का विज्ञान है, जिससे हम इस संसार-सागर से पार हो जाते हैं। मन्त्र-बल द्वारा भव-बन्धन से छूट कर हम ईश्वर का साक्षात्कार करते हैं। ध्यान-सहित जप करने से जीव पाप से छुटकारा पा कर स्वर्ग में भ्रमण करता है। पूर्ण छुटकारा पा लेने पर धर्म, अर्थ, काम और मोक्षह्लह्लचारों फल प्राप्त हो जाते हैं। **मन्** त्रह्लह्लइन दो अक्षरों के संयोग से **'मन्त्र'** शब्द बनता है, जिसका अर्थ होता है मनन करने से त्राण होना **(मननात् त्रायते इति मन्त्रः)।**

मन्त्र में देवत्व है, गुरुत्व है। यह कहना उचित होगा कि मन्त्र दिव्य शक्ति का प्रतीक है, जप ध्वनि का रूप धारण किये हुए हैं। मन्त्र स्वयं देवता है। जपने वाले को मन्त्र और मन्त्र के देवता की अभिन्नता का विचार करना चाहिए। जप करने वाले की उक्त धारणा जितनी दृढ़तर होगी, उतनी ही अधिक उसे सहायता भी मिलेगी। जैसे आग की लपट वायु की सहायता से जोर पकड़ती है, वैसे जप करने वाले व्यक्ति की शक्ति मन्त्र-शक्ति से बढ़ती है और उसे अधिकाधिक शक्तिशाली बना देती है।

भक्त की साधना से सुप्त-मन्त्र जाग्रत हो उठता है। देवता का मन्त्र उन अक्षरों का समूह है जो जापक के चेतन को देवता का साक्षात्कार करा देता है। मन्त्र-जप द्वारा मनुष्य की दिव्य शक्तियाँ जाग्रत हो उठती हैं।

मन्त्र में स्फुरण-शक्ति होती है, उसमें विस्तार होता है और उसमें से जीवन-शक्ति का अभ्युदय होता है। आध्यात्मिक जीवन व्यतीत करने के लिए यह अनिवार्य हो जाता है कि हमारे शरीर के सभी अंगों में

बराबर कार्य करने की शक्ति हो और मन, वाणी तथा कर्म में सामंजस्य हो। हमें पूर्णतः दिव्य शक्ति के साथ सामंजस्य स्थापित करने की चेष्टा करनी चाहिए। दिव्य शक्ति के साथ सामंजस्य स्थापित कर लेने पर हम आध्यात्मिक सत्य को समझ सकेंगे और समझने के पश्चात् उससे ऐक्य हो सकेगा। मन्त्र में ऐक्य और अनुरूपता को स्थापित करने की शक्ति है। मन्त्र-बल द्वारा ऐहिक और आमुष्मिक (परलोक-सम्बन्धी) चेतना का सन्दर्शन किया जा सकता है। मन्त्र-बल से साधक ज्ञान-प्रकाश, स्वतन्त्रता, अविच्छिन्न शान्ति, अनन्त आनन्द तथा अमरत्व की प्राप्ति कर लेता है। मन्त्र-बल में सिद्ध हो जाने से ज्ञान-चक्षु प्राप्त होते हैं।

वाणी की चार अवस्थाएँ होती हैंह्नह्न(अ) वैखरी अथवा व्यक्त स्वर, (आ) मध्यमा अथवा क्षीण स्वर, (इ) पश्यन्ती अथवा अन्तःकरण का स्वर, और (ई) परा अथवा बीज अवस्थागत स्वर। अन्तिम प्रकार की ध्वनि दिव्य शक्ति की परिचायिका है और ध्वनि-तत्त्व की महाशक्तिमयी अवस्था है। यह अव्यक्त रहती है। इसका श्रवण आत्म-ज्ञान के उपरान्त ही हो सकता है। परा वाणी भाषानुसार विविध नहीं होती है। आत्मा की ध्वनि होने से यह सभी भाषाओं में एक ही होती है।

मन्त्र के जप-साधन से साधक जीवन के चरम लक्ष्य की प्राप्ति कर सकता है भले ही उसे मन्त्रार्थ का ज्ञान न हो, पर इससे कुछ बिगड़ता नहीं। साधक अभ्यास के बल पर ही चरम सिद्धि को प्राप्त कर लेता है। इतना जरूर है कि इससे उद्देश्य-पूर्ति में जरा भी सन्देह नहीं। ईश्वर के नाम में अचिन्त्य और अकथनीय शक्ति है; पर यदि मन्त्र का अर्थ समझ कर जप किया जायेगा, तो ईश्वर-साक्षात्कार और भी जल्दी हो जायेगा।

मन्त्र-जप से हमारे मन की काम, क्रोध आदि अपवित्रताएँ दूर हो जाती हैं। जब हम दर्पण को निर्मल कर देते हैं, तो उसमें प्रतिबिम्ब स्पष्ट झलकने लगता है। ठीक इसी प्रकार जब अन्तःकरण की अपवित्रता का निराकरण हो जाता है, तो शक्ति का प्रतिबिम्ब स्पष्ट होने लगता है। हममें सत्य-दर्शन की शक्ति अधिकाधिक प्राप्त होने लगती है। जिस प्रकार साबुन के उपयोग से वस्त्र को निर्मल बना दिया जाता है, उसी प्रकार मन्त्र-बल से चित्त की अपवित्रता को भी दूर किया जा सकता है। जिस प्रकार अग्नि में तपने पर सोना खरा हो जाता है, उसी प्रकार मन्त्र-रूप अग्नि में तपने पर मन भी खरा बन जाता है। श्रद्धा और भक्तिपूर्वक अल्पांश जप भी हमारे मन को निर्दोष और पवित्र बना देता है। मन्त्र-जप से हमारे पाप नष्ट होते, हमें आनन्द की प्राप्ति होती और अमरत्व का वरदान मिलता है। इस विषय में सन्देह की गुंजाइश नहीं है।

ध्वनि और मूर्ति

ध्वनि स्फुरणात्मिका है। यह निरन्तर स्पन्दित होती रहती है। इसका रूप निश्चित होता है। यह शून्य में एक-एक रूप उत्पन्न करती है और अनेक ध्वनियों के संघात से विशिष्ट शक्ति की उत्पत्ति होती है। विज्ञान के प्रयोगों ने यह सिद्ध किया है कि विशिष्ट ध्वनियाँ विशिष्ट आकृति को जन्म देती हैं। किसी बाजे से निकली हुई ध्वनि भूमि पर विचित्र प्रकार की रेखाओं को अंकित कर देती है। अनेक प्रयोगों से यह सिद्ध हो गया है कि विभिन्न प्रकार की ध्वनियाँ विभिन्न प्रकार की रेखाओं को भूमि पर अंकित कर देती हैं। भारतीय

संगीत के ग्रन्थों में लिखा है कि संगीत के भिन्न-भिन्न राग और भिन्न-भिन्न रागिनियाँ अपना विशिष्ट रूप रखती हैं। उदाहरणार्थ मेघ राग के आकार का इन ग्रन्थों में शानदार वर्णन है, उसे हाथी पर विराजमान दिखाया गया है। वसन्त राग की आकृति एक सुन्दर युवक की-सी है, जो पुष्पों से अलंकृत है। इन सबका तात्पर्य यह है कि प्रत्येक राग-रागिनी ठीक से गाये जाने पर सूक्ष्म लहरों को उत्पन्न करती है, जिनसे स्वरूप-विशेष का आविर्भाव होता है। हाल के वैज्ञानिक प्रयोगों ने इस विश्वास का समर्थन किया है। वाट्स नामक एक महिला ने इस विषय के बहुमूल्य प्रयोग किये हैं। इन्होंने 'ध्वनि के रूप' शीर्षक से एक पुस्तक भी लिखी है, जिसमें इन विविध प्रयोगों का वर्णन है। इन्होंने लार्ड लेटन् की चित्रशाला में अपने इस वैज्ञानिक प्रयोग पर एक भाषण भी दिया था, जिसमें इनके अपने ध्वनि-सम्बन्धित प्रयोगों का सांगोपांग वर्णन हुआ था। बड़े परिश्रम से इन्होंने वर्षों तक ध्वनि-सम्बन्धी प्रयोग किये और इस परिणाम पर पहुँचीं। मिसेज् वाट्स अपना एक वाद्य, जिसका नाम ईडोफोन है, बजाती हैं। इस वाद्य में एक नली संयुक्त रहती है तथा एक रिसीवर और एक झिल्ली भी रहती है। अपने प्रयोगों से मिसेज् वाट्स ने यह विश्वास विस्तारित किया है कि विशिष्ट ध्वनियाँ अपना विशिष्ट रूप और महत्त्व रखती हैं और वे आकाश या धरातल पर उन-उन रूपों को अंकित भी कर सकती हैं। इन प्रयोगों का मनोरंजक विश्लेषण आपकी उपरिलिखित पुस्तक में है।

फ्रांस की एक महिला ने एक भजन में माता मरियम को सम्बोधित किया, तो माता मरियम की मूर्ति उनके सामने आ गयीह्वह्वउनकी गोद में प्रभु यीशु थे। इसी प्रकार वाराणसी का एक विद्यार्थी, जो फ्रांस में अध्ययन कर रहा था, भैरवदेव की स्तुति करते समय, अपने श्वान-वाहन पर आरूढ़ भैरव के साक्षात् दर्शन कर सका।

इसी प्रकार से ईश्वर का नाम बार-बार लेने से ईश्वर अथवा तुम्हारे इष्टदेवता, जिसकी तुम पूजा करते हो, का रूप तुम्हारे सम्मुख प्रत्यक्ष हो जाता है और वह रूप ही केन्द्र का कार्य करता है। इस केन्द्र पर ध्यान स्थापित करने से तुम ईश्वर के प्रभाव का ज्ञान पा सकते हो और यह समझ सकते हो कि यह प्रकाश जो केन्द्र से निकल कर धीरे-धीरे आराधक के हृदय में समा जाता है, उसी से वह अनन्त आनन्द का अनुभव करता है।

जब कोई ध्यान करने बैठता है, उस समय अन्तःकरण की वृत्ति का बहाव बहुत तीव्र हो जाता है। आप ध्यान में जितने संलग्न होंगे, बहाव भी उतना ही अधिक तीव्र होता हुआ प्रतीत होगा। चित्त की एकाग्रता से इस शक्ति का तीव्र वेग ब्रह्माण्ड की ओर आमुख होता है और फिर वहाँ से आकर्षण-शक्ति का प्रस्रवण होता है। हमारे अन्तःकरण से एक भावना जागती है, जो हमारे शरीर में व्याप्त हो जाती है और उस समय हमें ऐसा प्रतीत होता है, जैसे हम किसी विद्युत्-स्फुरण से भर गये हों। अतः हमें यह स्पष्ट हो गया कि :

१. ध्वनियाँ आकृति को जन्म देती हैं,

२. ध्वनि-विशेष से आकृति-विशेष का जन्म होता है, तथा

३. यदि विशेष प्रकार की आकृति की उत्पत्ति करनी हो, तो लहरात्मिका ध्वनि के साथ उसको उत्पन्न किया जा सकता है।

पंचाक्षर-मन्त्र **(ॐ नमः शिवाय)** का जप हमारे सामने शिव की मूर्ति को ला कर खड़ा कर देता है। विष्णु का अष्टाक्षर-मन्त्र **(ॐ नमो नारायणाय)** विष्णु के रूप को हमारे सामने प्रत्यक्ष कर देता है। मन्त्रगत ध्वनि में जो लहरें अन्तर्निहित हैं, उनका अपना विशेष महत्त्व है। इसीलिए स्वर तथा मन्त्र के वर्णों पर अधिक जोर दिया जाता है। वर्ण का अर्थ रंग से लिया जाता है। सूक्ष्म जगत् में समस्त ध्वनियों का अपना-अपना एक-एक रंग होता है, अतः प्रत्येक ध्वनि रंग-बिरंगी आकृतियाँ उत्पन्न करती हैं। इसी प्रकार प्रत्येक रंग से सम्बन्धित एक-एक ध्वनि होती है। अब हम इस निर्णय पर पहुँचते हैं कि रूप-विशेष की उत्पत्ति के लिए ध्वनि-विशेष का निःसारण करना पड़ता है। मन्त्र-विज्ञान का अध्ययन करने से हमें पता चलता है कि भिन्न-भिन्न देवताओं की प्रार्थना के लिए भिन्न-भिन्न मन्त्र प्रयुक्त करने पड़ते हैं।

यदि तुम शिव के उपासक हो, तो **'ॐ नमः शिवाय'** का जप करना चाहिए; लेकिन विष्णु और शक्ति के आराधक को दूसरा मन्त्र जपना चाहिए। जब मन्त्र जपते हो, तो क्या होता है? मन्त्र के बार-बार रटने से मन्त्र से सम्बन्धित देवता का रूप तुम्हारे सामने आ जाता है, यही रूप तुम्हारी चेतना का केन्द्र बन जाता है, जिससे तुम उसका सामीप्य अनुभव करने लगते हो। इसलिए कहा गया है कि देवता का मन्त्र वास्तव में स्वयं देवता ही है। यह बात मीमांसकों के कथन को बिलकुल स्पष्ट कर देती है। मीमांसकों का कथन है कि देवता और मन्त्र में विभिन्नता नहीं है। इसका स्पष्ट अर्थ यह है कि जब किसी मन्त्र-विशेष को ठीक रीति से जपा जाता है, तो उसके स्पन्दन विशिष्ट-लोक में प्रसारित हो जाते हैं और उतनी देर तक उन स्पन्दनों का एक रूप निश्चित हो जाता है।

(अनुवादिका : सुश्री कान्ती कपूर)

सांस्कृतिक कार्यक्रम

परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज की प्रथम पुण्य-तिथि आराधना, जो १४ अगस्त से १८ अगस्त २००९ तक मनायी जायेगी, से सम्बन्धित कार्यक्रमों की शृंखला में ही आश्रम मुख्यालय में दो संगीत कार्यक्रम मनाये गये। प्रथम कार्यक्रम जौधन तथा ऐन्ड्रयूके और जस्टिनग्रे (कैनेडा) द्वारा श्री सद्गुरुदेव समाधि मन्दिर में २ अप्रैल, २००९ को तथा द्वितीय शान्ति निवास देहरादून में ५ अप्रैल को दिया गया सभी श्रोताओं के लिए यह एक रोमांचक अनुभव रहा।

यह तीनों प्रदर्शनकारियों ने दीर्घकाल तक सुप्रसिद्ध गायक श्री शान्तन भट्टाचार्य से वादनकला संगीत प्रशिक्षण लेते हुए अपने अनुकूल वाद्योह्लसोप्रैनौ तथा अल्टोसैक्साफ़ोन तथा विद्युत् बास गिटार पर संगीत प्रस्तुत किया था। दिव्य जीवन संघ के परमाध्यक्ष स्वामी जी महाराज ने इन तीनों उदीयमान् संगीतकारों का हार्दिक धन्यवाद किया तथा इनके परम कल्याण, शान्ति और आनन्द प्राप्ति के लिए गुरुदेव से प्रार्थना की।

चेन्नै के श्री कांची कामकोटि नाट्यालयम से एक किशोर नृत्यमण्डली ने २५ तथा २६ अप्रैल २००९ को पावन समाधि मन्दिर में श्री रामायण जी पर दो दिवसीय नृत्यकला का प्रदर्शन किया। सभी दर्शक मण्डली ने तल्लीन हो कर इस सम्पूर्ण कार्यक्रम का भरपूर आनन्द लिया। दोनों दिन पूरे समय तक निस्तब्धता छाई रही तथा सारा समाधि हॉल दिव्य तरंगों से आच्छादित रहा। इस कार्यक्रम में भाग लेने वाले सभी किशोर तथा बाल-कलाकारों का सद्गुरुदेव की अपार कृपावृष्टि हो!